ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, *RNI:UPBIL04292,REG.No.:561/2013-14 Vol.-I, No.-1,* **PP-95-97**, *YEAR 2014*

भारतीय परिवार की क्रमिक यात्रा
(संयुक्तता से विघटन तक)

❑ डॉ0 अनीता सिंह*

परिवार सामाजिक जीवन की वह इकाई है जिसमें मनुष्य केवल जन्म ही नहीं लेता अपितु उत्कर्ष भी प्राप्त करता है तथा आजीवन उससे आबद्ध रहता है। सामान्यतः परिवार का निर्माण माता–पिता, पति–पत्नी, भाई–बहन तथा पुत्र–पुत्री के संयोग से होता है। परिवार प्राथमिक समूह के साथ मौलिक इकाई के रूप में स्वीकार किया जाता है। पारस्परिक रक्त सम्बन्ध ही इस इकाई को सुश्लिष्टता प्रदान करता है। परिवार का यही विकसित रुप ही जब अन्तर्वृत्त होता है तो स्वस्थ समाज की संरचना करता है।

वर्तमान युग के प्रसिद्ध समाजशास्त्री श्यामाचरण दूबे[1] ने परिवार को मानव की समस्त सामाजिक संस्थाओं में एक आधारभूत तथा सर्वव्यापी सामाजिक संस्था माना है। संस्कृति के सभी स्तरों में चाहे वह उन्नत हो या निम्न किसी न किसी प्रकार का पारिवारित संगठन अनिवार्यतः पाया जाता है। किंग्सले डेविस[2] परिवार को मनुष्यों का ऐसा समूह स्वीकार करते हैं जिसके परस्पर सम्बन्ध सगोत्रता पर आधारित होते हैं तथा एक दूसरे के रक्त सम्बन्धी होते हैं। मैकाइवर तथा पेज[3] ने परिवार को यौन–सम्बन्धों पर आधारित एक समूह माना जिसमें बच्चों की उत्पत्ति तथा पालन–पोषण सन्निहित है। बर्जेस तथा ब्लाक[4] की अवधारणा है कि परिवार ऐसे मनुष्यों का समूह है जो विवाह, रक्त अथवा गोद लेने के सम्बन्धों द्वारा संगठित है। एक छोटी सी गृहस्थी का निर्माण करते हैं और पति–पत्नी माता–पिता, पुत्र–पुत्री, भाई–बहन सामाजिक रूप में एक दूसरे से अन्तःक्रियाएँ करते हैं तथा एक सामान्य संस्कृति का निर्माण करके उसकी देख–रेख करते हैं। ऑगबर्न तथा निमकाफ[5] ने न्यूनाधिक मात्रा में परिवार को एक स्थायी समिति माना जो पति–पत्नी से बनती है। चाहे उनके सन्तान हो या न हो। परिवार के प्रकार्यों का उल्लेख विभिन्न समाजशास्त्रियों ने भिन्न–भिन्न प्रकार से किया है।

भारत में परिवार का उद्‌गम एवं विकास किस भाँति हुआ? यह अद्यतन अनुत्तरित एवं कल्पना–प्रसूत है। पाश्चात्य जगत की भाँति भारतीय मनीषियों का एक वर्ग यह स्वीकार करता है कि भारत में भी विवाह–संस्था का उदय कामाचार से हुआ।[6] अपने मत के समर्थन में इस भाँति के विद्वानों ने महाभारत में वर्णित पाण्डु के कथन[7] तथा दीर्घतमा की कथा[8] को प्रस्तुत किया है। इसी भाँति अन्य कथन को भी प्रस्तुत किया है किन्तु यदि सम्पूर्ण कथानक की गवेषणा की जाय तो उक्त अवधारणा त्रुटिपूर्ण एवं लचर प्रतीत होती है।[9] पुनः महाभारत के पूर्व अस्तित्व में आये सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय में कामाचार का कोई संकेत नहीं मिलता। इस युग में युवक युवतियों को अपना जीवन–साथी चुनने की स्वतन्त्रता थी किन्तु विवाहोपरान्त स्त्रियाँ पति के घर जाकर गृह पत्नी का कार्य एवं परिवार का निर्माण करती थी।

परिवार के उद्‌गम का आधारभूत तत्व की गवेषणा के लिये समाजशास्त्री तथा अन्य अनेक जीवशास्त्री प्रयत्नशील हैं जिसका उत्तर हमें जीवशास्त्र से मिलता है।[10] इसके अनुसार स्त्री–पुरुष सम्बन्ध के स्थायित्व और परिवार निर्माण का कारण मनुष्य में अपनी जातियात को बनाये रखने की चिन्ता है। यदि पुरुष सम्बन्ध के बाद स्त्री से पृथक् हो जाय, गर्भावस्था में पत्नी की देखभाल न की जाय, सन्तान उत्पन्न होने पर उसके समर्थ एवं बड़ा होने तक

*असि0 प्रोफेसर–समाजशास्त्र बदली महाविद्यालय अमरेथू डड़िया, कादीपुर, सुलतानपुर, उ0 प्र0

उसकी रक्षा एवं सहायता न की जाय तो शीघ्र ही मानव जाति का अन्त हो जायेगा। अपने मत के समर्थन में इस भाँति के विद्वानों ने अनेक मानवेतर प्राणियों के उदाहरण भी प्रस्तुत किये हैं।[11]

सन्तान–शिक्षण, सामाजिक परम्पराओं का संरक्षण, व्यक्तित्व–निर्माण आदि परिवार द्वारा ही पूर्ण होते हैं। परिवार में ही बच्चे को अपने कर्तव्यों का बोध भी होता है। वह समाज के धार्मिक एवं नैतिक आदर्शो से परिचित होता है। अनेक मनोवैज्ञानिक मनुष्य की सभी परोपकारी प्रवृत्तियों का मूल पारिवारिक जीवन को मानते हैं।[12] यही कारण है कि वैदिक युग में परिवार को अत्यधिक महत्ता तो प्रदान ही की गयी साथ ही व्यक्ति को तब तक अपूर्ण समझा गया जब तक वह विवाह द्वारा सन्तान उत्पन्न न कर ले। महाभारतकार ने इसका गौरवगान अन्य शास्त्रकारों की अपेक्षा अधिक किया है।[13]

भारतीय परिवार का वर्तमान स्वरूप के विकास क्रम को निम्न प्रकार से दर्शित किया जा सकता है: वैदिककाल में संयुक्त परिवार–प्रणाली विद्यमान थी। संयुक्त परिवार एक निकाय या सामूहिक संगठन (कारपोरेशन) था। इसका मुखिया (गृहपति) एक प्रकार का ट्रस्टी था जो सम्पूर्ण परिवार की सम्पत्ति का प्रबन्ध इस भांति करता था जिससे परिवार के सभी सदस्यों का कल्याण ऐहिक तथा पारलौकिक दोनों दृष्टियों से हो। पारिवारिक सदस्यों की सारी आय एक कोश में संग्रहीत की जाती है तथा गृहपति सबकी आवश्यकतायें पूरी करने के लिये यथेच्छा उसका उपयोग करता था।[14]

उत्तर वैदिक काल में पिता के अधिकार घटते तथा संयुक्त परिवार विघटित होता प्रतीत होता है। तैत्तिरीय संहिता[15] में कहा गया है कि मनु ने अपने पुत्रों के बीच दायभाग का बटँवारा किया। ऐतरेय ब्राह्मण[16] में कहा गया है कि मनु के पुत्रों ने स्वतः सम्पत्ति का बटँवारा कर लिया था। इससे स्पष्ट है कि इस काल तक आते–आते पुत्र पिता की सम्पत्ति पर अपना अधिकार मानने लगे थे। पिता द्वारा अपने जीवन काल में ही पुत्रों के बीच सम्पत्ति के बटँवारे के मूल में पिता के मन में समायी वह आशंका रही होगी कि कहीं उसके बाद पुत्रों के मध्य सम्पत्ति के बटँवारे को लेकर कहीं कोई संघर्ष प्रारम्भ न हो जाय। इन परिस्थितियों में भी पिता पुत्रों के मध्य सम्पत्ति–बटँवारे के समय अपनी इच्छानुसार बटँवारा करता था।[17] पिता की मृत्यु के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र गृहपति के रुप में स्वीकार किया जाता था।

कालान्तर में संयुक्त परिवार विरोधी प्रवृत्तियों का उदय हुआ। इसका मूल कारण था पिता के अधिकारों का क्रमिक क्षरण। उसके जीवनकाल में उसकी सम्मति के अभाव में दाय–विभाजन की बात स्वीकार कर ली गयी, पुनः स्वेच्छानुसार पुत्रों के दाय–विभाजन का सिद्वान्त अस्तित्व में आया। गौतम ने बटँवारे को धर्मवृद्धि का हेतु कहा।[18] व्यास[19] तथा मनु[20] ने इस धारणा का अनुमोदन किया। प्रारम्भ में यह अवधारणा धर्म के प्राचीर में ही बँधी थी किन्तु कालान्तर में दायभाग की परिधि में प्रतिष्ठित हो गयी जिसने संयुक्त परिवार की विघटन की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया।

छठीं शताब्दी में जब परिस्थितियाँ परिवर्तित होने लगीं तो लोगों की मनोवृत्ति संयुक्त परिवार प्रणाली की ओर परिवर्तित हुई। परिणामतः स्वार्जित सम्पत्ति का क्षेत्र संकुचित किया गया। अब यह सम्पत्ति मात्र दो रूपों में रह गयी– विद्या–धन तथा शौर्य–धन। कात्यायन ने विद्या–धन को और अधिक संकुचित कर दिया और कहा कि यदि दूसरे का धन खाते हुए विद्या–धन अर्जित किया जाय तो उसका विद्याधन अविभाज्य होगा।[21] व्यास ने शौर्यधन के विषय में इसी भांति का दृष्टिकोण अपनाते हुये कहा कि यदि वैयक्तिक रथ और तलवार से धन अर्जित किया जाय तो वह शौर्यधन होगा तथा वैयक्तिक होगा। इस काल में संयुक्त परिवार के बढ़ने का कारण विकास का अनुसरण, हूण–आक्रमण, अनाथों–विधवाओं आदि को आश्रय आदि नवीन परिस्थितियाँ रही हैं।

वर्तमान युग में संयुक्त परिवार–प्रणाली विघटित हो रही है। इसके अनेक कारण हैं। प्रथम तथा प्रधान

कारण तो नवीन आर्थिक परिस्थितियाँ है। आजीविका के लिये व्यापार, व्यवसाय, शिक्षा, कानून, आदि नये व्यवसाय उन्नत हो चुके हैं। गाँव के कुटीर उद्योग नष्ट हो चुके हैं। उनके स्थान पर कल–कारखाने अस्तित्व में आ चुके हैं जो आकर्षक वेतन प्रदान करते हैं। परिणामतः व्यक्ति परिवार से वियुक्त होता है। पश्चिम की व्यष्टिवादी विचारधारा स्वत्व तथा अधिकार प्रधान है। पूर्वी विचारधारा उत्तरदायित्व प्रधान है। भारत में ब्रिटिश शासन के बाद तो संयुक्त परिवार–प्रणाली और अधिक विघटित हो गयी। स्वार्थान्धतापूर्ण अंग्रेजी शिक्षा ने तो इस परिवार प्रणाली को और अधिक क्षति पहुँचायी। इस तथ्य से भी नहीं नकारा जा सकता कि संयुक्त परिवार प्रणाली ने अकर्मण्यों की संख्या में वृद्धि की। पुनः इस भांति की परिवार प्रणाली में व्यक्तित्व के विकास में बाधाएँ उत्पन्न होती हैं तथा स्त्रियों को अत्यधिक परिश्रम व कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। दाम्पत्य प्रेम के विकास के अवसर तो अत्यन्त न्यून होते हैं। इस भाँति के परिवार में ईर्ष्या–द्वेष की भी भावना विद्यमान होती है। संयुक्त परिवार का सदस्य स्वावलम्बी तथा आत्मनिर्भर नहीं बनना चाहता। वह परिवार की आर्थिक स्थिति में तो वृद्धि नहीं करता किन्तु परिवार के सदस्यों की संख्या में वृद्धि अवश्य करता है। पृथक् पारिवारिक जीवन–यापन करने वाला व्यक्ति अपनी आय के अनुरूप ही सन्तान उत्पन्न करता है।

अनुकूल परिस्थितियों में कोई व्यवस्था विकास का आधार बनती है, वहीं प्रतिकूल परिस्थितियों में अवनति एवं विटघन का कारण बन जाती है। भारतीय पारिवारिक जीवन को भी इन्हीं सन्दर्भों में ग्रहण करना समीचीन होगा। वर्तमान समय में नगरों तथा शिक्षित समाज में संयुक्त परिवार प्रणाली विघटित हो रही है। समानाधिकार के भावों से अनुप्राणित युवतियाँ भी पृथक् पारिवारिक परम्परा में विश्वास करती हैं। इस सम्बन्ध में के0टी0 मर्चेन्ट ने पृच्छाओं के माध्यम से युवकों तथा युवतियों की भावोष्माओं तथा धारणाओं का अध्ययन किया। इस पृच्छा में 40.90 प्रतिशत युवकों ने विरोध किया। युवतियों में केवल 13.8 प्रतिशत ने इसका समर्थन किया तथा 75ः ने घोर विरोध किया।[22] इससे यह भासित होता है कि शिक्षित युवतियों के पतियों को उनकी भावनाओं के कारण बाध्य होकर संयुक्त परिवार प्रणाली का त्याग करना पड़ रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. दुबे, श्यामाचरण; मानव और संस्कृति, पृ0–99
2. डेविस, के0 ह्यूमन; सोसायटी, पृ0–397
3. मैकाइवर तथा पेज, समाज (हिन्दी अनुपात) पृ0–221
4. बर्गेस और लॉक, फेमिली, पृ0–8
5. ऑगबर्न और निमकाफ; ए हैण्डबुक आफ सोसियालोजी पृ0–459
6. जायसवाल, के0पी0; मनु एण्ड याज्ञवल्क्य, पृ0–324–25 अल्टेकर, ए0 एस0; पोजीशन आफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, पृ0–33–66;
7. महाभारत 1. 122. 3–21
8. वही 1.104.9–56
9. वही 8.44.11–33
10. वेस्टरमार्क; शार्ट हिस्ट्री आफ मैरिज, अध्याय–प्रथम
11. वेस्टरमार्क; फ्यूचर आफ मैरिज,
12. एलवुड सोसियालोजी एण्ड इट्स साइकालोजिकल एस्पेक्ट्स, पृ0–213,
13. महाभारत 12.270.6–7
14. जाथर बेरी; इंडियन इकोनामिक्स, खण्ड–1, पृ0–103–4
15. तैत्तिरीय संहिता 3.1.9.4
16. ताण्ड्य ब्राह्मण 16.4.4.3–4
17. विभागे तु धर्मबुद्धि। गौतम स्मृति 18.4
18. वृहस्पति, अपरार्क 2.114
19. व्यास–दायभाग 60
20. मनुस्मृति 9.111
21. मिताक्षरा 2.119
22. मर्चेन्ट, के0टी0; चेंजिंग व्यूज आन मैरिज एण्ड फैमिली, पृ0–243